Ancient Vedic Mantras and Rituals

Shrimad Bhagavad Gita Chapter–3 Shalok–41 | श्रीमद् भगवद्गीता अध्याय तीन–श्लोक इकतालीस | PDF

अध्याय 3 – कर्म योग
श्लोक 41
तस्मात्त्वमिन्द्रियाण्यादौ नियम्य भरतर्षभ ।
पाप्मानं प्रजहि ह्येनं ज्ञानविज्ञाननाशनम् ॥41॥
सरल हिंदी में भावार्थ

भगवान श्रीकृष्ण कहते हैं–

हे भरतश्रेष्ठ (अर्जुन)! इसलिए सबसे पहले अपनी इन्द्रियों को वश में करो और इस पापरूपी काम (इच्छा) का नाश करो, क्योंकि यही ज्ञान और आत्मानुभूति (विज्ञान) दोनों का विनाश करने वाला है।

विस्तृत व्याख्या

इन्द्रिय संयम का महत्व

इस श्लोक में भगवान श्रीकृष्ण अर्जुन को स्पष्ट निर्देश देते हैं कि आध्यात्मिक जीवन की शुरुआत इन्द्रियों के संयम से होती है।

जब इन्द्रियाँ अनियंत्रित रहती हैं, तब वे मन को विषयों की ओर आकर्षित करती हैं और इच्छाएँ उत्पन्न करती हैं।

इसी कारण भगवान सबसे पहले इन्द्रिय-निग्रह को आवश्यक बताते हैं।

काम – ज्ञान और विज्ञान का शत्रु

भगवान काम (अनियंत्रित इच्छा) को केवल ज्ञान का ही नहीं, बल्कि विज्ञान अर्थात् प्रत्यक्ष आत्मानुभूति का भी विनाशक बताते हैं।

ज्ञान का अर्थ है सत्य का बौद्धिक ज्ञान, जबकि विज्ञान का अर्थ है उस सत्य का प्रत्यक्ष अनुभव।

जब इच्छाएँ प्रबल होती हैं, तब मनुष्य न केवल सही ज्ञान से दूर हो जाता है, बल्कि आध्यात्मिक अनुभव से भी वंचित रह जाता है।

इच्छा से पाप की उत्पत्ति

अनियंत्रित इच्छाएँ मनुष्य को अधर्म और पाप की ओर ले जा सकती हैं।

जब किसी इच्छा की पूर्ति किसी भी मूल्य पर करने की प्रवृत्ति बढ़ जाती है, तब व्यक्ति सत्य, धर्म और नैतिकता की उपेक्षा करने लगता है।

इसी कारण भगवान काम को पाप का मूल कारण बताते हैं।

आत्मसंयम ही विजय का मार्ग

इन्द्रियों पर नियंत्रण केवल बाहरी अनुशासन नहीं, बल्कि आंतरिक शक्ति का विकास है।

जब मनुष्य अपनी इच्छाओं का दास बनने के बजाय उनका स्वामी बन जाता है, तब उसका मन स्थिर और शांत रहने लगता है।

ऐसी स्थिति में विवेक जागृत होता है और सही निर्णय लेना सरल हो जाता है।

कर्मयोग की दृष्टि

कर्मयोग सिखाता है कि इन्द्रियों का दमन नहीं, बल्कि उनका उचित नियंत्रण आवश्यक है।

जब मनुष्य अपने सभी कर्म ईश्वर को समर्पित करके निष्काम भाव से करता है, तब धीरे-धीरे इच्छाओं का प्रभाव कम होने लगता है।

भक्ति, ध्यान, आत्मसंयम और सत्कर्म के द्वारा मन शुद्ध होता है तथा ज्ञान और आत्मानुभूति दोनों विकसित होते हैं।

मुख्य बिंदु

- सबसे पहले इन्द्रियों को नियंत्रित करना आवश्यक है।
- काम ज्ञान और विज्ञान दोनों का नाश करता है।
- अनियंत्रित इच्छाएँ पाप और अधर्म का कारण बनती हैं।

- आत्मसंयम से मन स्थिर और बुद्धि शुद्ध होती है।
- इन्द्रिय-निग्रह आध्यात्मिक उन्नति की पहली सीढ़ी है।
- निष्काम कर्म और भक्ति से इच्छाओं का प्रभाव कम होता है।
- ज्ञान और आत्मानुभूति से जीवन में शांति और मुक्ति प्राप्त होती है।

गूढ़ आध्यात्मिक अर्थ

यह श्लोक सिखाता है कि आत्मज्ञान प्राप्त करने के लिए केवल शास्त्रों का अध्ययन पर्याप्त नहीं है।

जब तक इन्द्रियाँ नियंत्रित नहीं होतीं और इच्छाओं पर विजय नहीं मिलती, तब तक ज्ञान व्यवहार में नहीं उतरता और आत्मानुभूति भी संभव नहीं होती।

भगवान श्रीकृष्ण बताते हैं कि साधक को सबसे पहले अपनी इन्द्रियों पर नियंत्रण स्थापित करना चाहिए। इसके बाद निष्काम कर्म, ईश्वर-भक्ति, ध्यान और निरंतर साधना के माध्यम से काम रूपी आंतरिक शत्रु का नाश करना चाहिए। तभी ज्ञान और विज्ञान दोनों प्रकाशित होते हैं तथा मनुष्य आत्मशांति, आत्मज्ञान और अंततः मोक्ष की ओर अग्रसर होता है।

पदों का भावार्थ

तस्मात् – इसलिए

त्वम् – तुम

इन्द्रियाणि – इन्द्रियों को

आदौ – सबसे पहले

नियम्य – नियंत्रित करके

भरतर्षभ – हे भरतवंश के श्रेष्ठ अर्जुन

पाप्मानम् – पापरूपी शत्रु

प्रजहि – नष्ट करो

हि – निश्चय ही

एनम् – इस (काम) को

ज्ञान – शास्त्रीय ज्ञान

विज्ञान – प्रत्यक्ष आत्मानुभूति

नाशनम् – नष्ट करने वाला

श्लोक का संदेश

भगवान श्रीकृष्ण सिखाते हैं कि आध्यात्मिक जीवन की सफलता का प्रथम चरण इन्द्रियों का संयम है। अनियंत्रित काम (इच्छा) ज्ञान और आत्मानुभूति दोनों का नाश कर देता है तथा मनुष्य को पाप और मोह की ओर ले जाता है। इसलिए इन्द्रिय-निग्रह, निष्काम कर्म, भक्ति, ध्यान और आत्मसंयम के द्वारा इस आंतरिक शत्रु पर विजय प्राप्त करनी चाहिए।

तभी ज्ञान प्रकाशित होता है, आत्मानुभूति प्राप्त होती है और मनुष्य शांति, आत्मशुद्धि तथा अंततः मोक्ष की ओर अग्रसर होता है।

RELATED ARTICLE

Chapter–3 Shalok–39

Chapter–3 Shalok–40

THANKS FOR READING

READ MORE RELIGIOUS CONTENT ON

vedicprayers.com

VEDIC PRAYERS